

समतुल्य उद्धरण : 1985 पी.एल.जे.आर. 856

पटना के उच्च न्यायालय में

सिविल रिट अधिकारिता मामला सं. 1898/1975

निर्णय दिनांक 16.05.1984

याचिकाकर्तागण: बिहार राज्य सड़क परिवहन निगम

बनाम

उत्तरदातागण: राज्य परिवहन अपीलीय न्यायाधिकरण और अन्य

सड़क परिवहन निगम अधिनियम, 1950-धारा 20, 47

इस रिट में मुद्दा यह है कि याचिकाकर्ता एवं उत्तरदाता सं०-4 के बीच में किसे हजारीबाग से जमशेदपुर के रास्ते में परिवहन चलाने का अनुज्ञप्ति देना चाहिए।

याचिकाकर्ता ने परमिट के लिये आवेदन दिया - पाँच साल के परमिट दिया गया - पाँच (5) साल के बाद परमिट नवीनीकरण के लिये आवेदन दिया गया - नवीनीकरण के लिये आवेदन स्वीकृत किया गया - उत्तरदाता-4 ने परमिट के लिये आवेदन दिया - अस्वीकार किया गया - अस्वीकृति के बाद अपील - अपील स्वीकार कर दिया गया तथा उत्तरदाता सं०-4 के पक्ष में अनुज्ञप्ति प्रदान किया गया तथा याचिकाकर्ता के पक्ष में जारी किये गये अनुज्ञप्ति को रद्द कर दिया गया। उपरोक्त निर्णय से असंतुष्ट होकर याचिकाकर्ता ने यह रिट याचिका दायर किया है।

निर्णित किया गया कि उत्तरदाता सं०-4 के पक्ष में अनुज्ञप्ति दिनांक 31-03-1971 के अधिसूचना के तहत लिया गया जो कि उचित था।

फिर निर्णित किया गया कि इस याचिका में कोई गुणागुण नहीं है, इसलिये इसे खारिज कर देना चाहिये।

समतुल्य उद्धरण : 1985 पी.एल.जे.आर. 856

पटना के उच्च न्यायालय में

सिविल रिट अधिकारिता मामला सं. 1898/1975

निर्णय दिनांक 16.05.1984

याचिकाकर्तागण: बिहार राज्य सड़क परिवहन निगम

बनाम

उत्तरदातागण: राज्य परिवहन अपीलीय न्यायाधिकरण और अन्य

माननीय न्यायाधीश/कोरम:

ब्रिश्केतु शरण सिन्हा, एन.पी. सिंह और एस. नारायण, न्यायामूर्तिगण

वकीलगण:-

अपीलार्थी/याचिकाकर्ता/वादी के लिए: श्री जगत नंदन प्रसाद सिन्हा

उत्तरदाताओं/प्रतिवादी के लिए: श्रीनाथ सिंह और बिभूति प्रसाद पांडे

निर्णय

ब्रिश्केतु शरण सिन्हा, न्यायमूर्ति।

1. याचिकाकर्ता, बिहार राज्य सड़क परिवहन निगम ने संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत इस आवेदन में, प्रतिवादी संख्या 1, राज्य परिवहन अपीलीय न्यायाधिकरण द्वारा 1971 के टी. ए. संख्या 53 में पारित 19 मई, 1975 के आदेश को रद्द करने के लिए एक रिट या आदेश जारी करने के लिए प्रार्थना किया है। आदेश की एक प्रति अनुलग्नक '5' है। उपरोक्त आदेश द्वारा राज्य परिवहन अपीलीय न्यायाधिकरण ने निर्देश दिया है कि हजारीबाग से रामगढ़, चास, पुरलिया और अदारडीह होते हुए जमशेदपुर जाने वाले मार्ग के

संबंध में प्रतिवादी संख्या 4 को अनुमति दी जाए। प्रासंगिक तथ्य संक्षिप्त रूप से निम्न वर्णित हैं। 10 सितंबर, 1961 को याचिकाकर्ता ने उपरोक्त मार्ग के संबंध में परमिट देने के लिए आवेदन किया। कोई आपत्ति दर्ज नहीं किए जाने के बाद, याचिकाकर्ता निगम को 27 जनवरी, 1965 को पांच साल के लिए अनुमति दी गई थी। 20 नवंबर, 1969 को, पांच साल बीतने से पहले, निगम ने परमिट के नवीनीकरण के लिए एक और आवेदन किया। 19 मई, 1970 को प्रत्यर्थी संख्या 4 ने इसी मार्ग के संबंध में परमिट देने के लिए आवेदन किया। छोटानागपुर क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण ने 5 मई, 1971 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता निगम द्वारा परमिट के नवीनीकरण के लिए आवेदन की अनुमति दी और प्रतिवादी 4 के दावे को खारिज कर दिया। इस आदेश से व्यथित होकर, प्रत्यर्थी संख्या 4 ने प्रत्यर्थी संख्या 1, राज्य परिवहन अपीलीय न्यायाधिकरण (जिसे इसके बाद 'न्यायाधिकरण' के रूप में संदर्भित किया गया है) के समक्ष एक अपील दायर की, जिसने 21 नवंबर, 1972 के अपने आदेश द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 4 की अपील को अनुमति दी और निर्देश दिया कि उक्त मार्ग के लिए अनुमति प्रत्यर्थी संख्या 4 को जारी की जाए। उपरोक्त निष्कर्ष पर पहुँचते हुए न्यायाधिकरण ने अभिनिर्धारित किया कि सड़क परिवहन निगम अधिनियम, 1950 (जिसे इसके बाद 'निगम अधिनियम' के रूप में संदर्भित किया गया है) की धारा 20 के प्रावधानों का पालन न करने के कारण निगम के पक्ष में परमिट का नवीनीकरण अवैध था क्योंकि प्रश्नगत मार्ग एक अंतर-राज्यीय मार्ग था। यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि प्रतिवादी संख्या 4 उक्त मार्ग के लिए परमिट प्राप्त करने का हकदार था। उस निर्णय से व्यथित निगम निष्कर्षों को चुनौती देते हुए 1973 के इस न्यायालय में सी.डब्लू.जे.सी. 147 में दायर की। उस रिट आवेदन का निपटारा 26 जुलाई, 1974 को इस न्यायालय की एक पीठ द्वारा किया गया था, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यह मार्ग अंतर-राज्यान्तरिक मार्ग नहीं था, बल्कि एक अंतर-राज्यीय मार्ग था और इसलिए निगम अधिनियम की धारा 20 के लागू होने का कोई सवाल ही नहीं था। अतः यह अभिनिर्धारित किया गया कि अपीलीय न्यायाधिकरण

ने निगम अधिनियम की धारा 20 के प्रावधानों के लागू होने के संबंध में गलत दृष्टिकोण अपनाया। इसने आगे निर्देश दिया कि यदि अपीलीय न्यायाधिकरण परमिट के नवीनीकरण के लिए निगम के दावे को अस्वीकार करना चाहता है, तो उसे अधिनियम की धारा 47 द्वारा निर्धारित विचारों को ध्यान में रखते हुए मामले की विस्तार से जांच करनी चाहिए थी और यह एक स्पष्ट निष्कर्ष दर्ज करने के बाद निगम के आवेदन को खारिज कर सकता था कि निगम के पक्ष में परमिट का नवीनीकरण आम जनता के हित में नहीं था। तदनुसार, उपरोक्त टिप्पणियों के आलोक में पुनर्विचार और उचित निर्णय के लिए मामला अपीलीय न्यायाधिकरण को भेजा गया था। इस न्यायालय की पीठ के इस निर्णय की सूचना मनु./बी. एच./0043/179 में । ए. आई. आर. 1975 पैट 17.

2. इसके बाद मामला फिर से अपीलीय न्यायाधिकरण के पास गया और अपीलीय न्यायाधिकरण, मामले पर पुनर्विचार करने पर निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुंचा:--

- (i) परमिट के नवीनीकरण के लिए आवेदन करने में विफलता स्पष्ट रूप से दिखाई दी। कि निगम की मुकदमेबाजी के क्षेत्र से परे के मार्ग में बहुत कम रुचि बची थी।
- (ii) रिपोर्टों से यह प्रतीत होता है कि निगम इस मार्ग पर सेवा प्रदान करने में अत्यधिक अनियमित था और उस तरीके से वाहन नहीं चला रहा था जैसा उसे करना चाहिए था।
- (iii) प्रत्यर्थी संख्या 4 21 नवंबर, 1972 से 26 जुलाई, 1974 तक इस मार्ग पर नियमित रूप से वाहन चला रहा था और प्रत्यर्थी संख्या 4 द्वारा इस अवधि के दौरान किसी भी प्रकार की चूक की कोई शिकायत नहीं थी कि वह इस मार्ग पर वाहन चला रहा था।

(iv) अनुभव की दृष्टि से दोनों पक्षों का मामला शायद ही ऐसा प्रतीत होता है कि वे दोनों में से किसी के पक्ष में किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचे, लेकिन प्रतिवादी संख्या 4 ने लगातार और नियमित सेवा से अनुभव प्राप्त किया, जबकि निगम जब चाहे इस मार्ग पर सेवा प्रदान करता था और जब चाहे इस मार्ग से वाहनों को दूर रखता था।

इसलिए, अपीलीय न्यायाधिकरण ने निष्कर्ष निकाला कि एक ऐसे प्रचालक को इस मार्ग के लिए परमिट पर भरोसा करना जो लोगों की निरंतर सेवा नहीं कर सकता है, यात्रीगण के लिए शायद ही कोई लाभ होगा और इस प्रकार मोटर वाहन अधिनियम की धारा 47 (1) के प्रावधानों की भावना ही विफल हो जाएगी यदि निगम को परमिट दिया जाता है।

3. एक ऐसे मार्ग के संबंध में जहां इसका एक हिस्सा बिहार राज्य के बाहर था, यह संदेह था कि यदि मार्ग के एक अच्छे हिस्से का राष्ट्रीयकरण किया जाता है, तो यह निगम के पक्ष में एक बिंदु होगा। इन निष्कर्षों पर अपीलीय न्यायाधिकरण ने फिर से निर्देश दिया कि क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकरण के आदेश को दरकिनार कर दिया जाए और प्रतिवादी संख्या 4 को अनुमति दी जाए। पुनः, इस आदेश से व्यथित निगम ने यह वर्तमान रिट आवेदन दायर किया है जो एन. पी. सिंह और शिवनुग्रह नारायण न्यायमूर्तिगण की इस न्यायालय की पीठ के समक्ष अंतिम सुनवाई के लिए आया है। उनसे पहले, पहली बार निगम द्वारा एक नया रुख अपनाया गया था। यह प्रस्तुत किया गया था कि इस मार्ग के 152 मील में से 106 मील को मोटर वाहन अधिनियम (इसके बाद 'वाहन अधिनियम' के रूप में संदर्भित) के प्रावधानों के अनुसार 1970 से पहले अधिसूचित किया गया है और निगम के अनुसार, न्यायाधिकरण प्रतिवादी संख्या 4 को अनुमति नहीं दे सकता था। यह ध्यान दिया जा सकता है कि इस मार्ग में से अदराडीह से सरडीह सीमा तक की लगभग 36 मील की दूरी पश्चिम

बंगाल में आती है और सरडीह से चास तक के 8 मील के मार्ग को राष्ट्रीयकरण के लिए अधिसूचित नहीं किया गया है।

शेष मार्ग अर्थात् जमशेदपुर से अदराडीह जो 25 मील की दूरी पर है और रामगढ़ जो 50 मील की दूरी पर है और रामगढ़ से हजारीबाग जो 35 मील की दूरी पर है, धारा 68 के तहत अधिसूचित मार्ग हैं।

4. न्यायमूर्ति श्री एन. पी. सिंह ने अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि इस मामले के प्रयोजनों के लिए मार्ग को अंतर-राज्यीय मार्ग माना जाना चाहिए, फिर भी न्यायपालिका के सिद्धांतों पर याचिकाकर्ता के पक्ष में कोई रिट जारी नहीं की जा सकती है। उस निष्कर्ष पर पहुँचते हुए न्यायमूर्ति एन. पी. सिंह ने अभिनिर्धारित किया कि वर्तमान मामले में न्यायालय निगम को यह दलील उठाने की अनुमति देने के लिए अनिच्छुक होगा कि मार्ग के बड़े हिस्से का राष्ट्रीयकरण किया जा रहा है, न्यायाधिकरण प्रतिवादी संख्या 4 को अनुमति नहीं दे सकता था। दूसरी ओर, न्यायमूर्ति शिवनुग्रह नारायण ने अभिनिर्धारित किया कि इस तथ्य को कि यह एक अंतर-राज्यीय मार्ग था, इस मामले में न्यायिक आधार पर माना जाना चाहिए, लेकिन याचिकाकर्ता को यह प्रश्न उठाने का अधिकार है कि मार्ग के एक बड़े हिस्से का राष्ट्रीयकरण होने के कारण प्रतिवादी संख्या 4 के पक्ष में कोई परमिट जारी नहीं किया जा सकता है। कुछ अन्य बिंदुओं पर भी उनका मतभेद था और अंततः न्यायमूर्ति सिंह ने रिट आवेदन को खारिज कर दिया। न्यायमूर्ति नारायण ने आवेदन को स्वीकार कर लिया और न्यायाधिकरण के आदेश को रद्द कर दिया। दोनों विद्वान न्यायाधीशों के बीच मतभेद के कारण, उन्होंने इस न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश को भेजे जाने के लिए अभिलेखों को माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखने का निर्देश दिया। तदनुसार, यह मामला लेटर्स पेटेंट के खंड 28 के तहत निर्णय के लिए मेरे समक्ष रखा गया है। विद्वान न्यायाधीशों ने

कानून के उस प्रश्न को तैयार नहीं किया, जिस पर उनका मतभेद है, लेकिन तत्काल मामले में, इसे सरलता से निम्नानुसार तैयार किया जा सकता है:--

इस मामले की परिस्थितियों में रिट जारी की जानी चाहिए या नहीं?

5. इस आवेदन के समर्थन में श्री जगत नंदन प्रसाद सिन्हा ने तर्क दिया है कि इस मामले में इस न्यायालय का पूर्व निर्णय, जिसे मैं सुविधा के लिए ए.आई.आर. 1975 पैट 179 में दर्ज मामले के रूप में संदर्भित करूंगा: ए. आई. आर. 1975 पैट 179, यह था कि विचाराधीन मार्ग एक अंतर-राज्यीय मार्ग है न कि एक अंतर-राज्यीय मार्ग और; इसलिए, सड़क निगम अधिनियम की धारा 20 के लागू होने का कोई सवाल ही नहीं था और मोटर वाहन अधिनियम की धारा 68-डी के तहत अधिसूचित मार्ग होने के कारण प्रतिवादी संख्या 4 को 108 मील के मार्ग के लिए अनुमति नहीं दी जा सकती थी क्योंकि यह वर्जित था। इसलिए, उन्होंने प्रस्तुत किया कि न्यायाधिकरण का नया निर्णय केवल अन्य मामलों पर हो सकता है और उपरोक्त दो निष्कर्ष प्रश्नगत नहीं हो सकता है। यदि विद्वान वकील इस तर्क में सही है कि पहले के निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रतिवादी संख्या 4 को अधिसूचित किए जा रहे मार्ग के 108 मील के लिए अनुमति नहीं दी जा सकती थी, तो मुझे लगता है कि यह अभिनिर्धारित करने में कोई कठिनाई नहीं हो सकती है कि अपीलीय न्यायाधिकरण का आदेश कानून के अनुसार नहीं है और इसे दरकिनार किया जाना चाहिए। यह अच्छी तरह से तय है कि जब किसी योजना को मोटर वाहन अधिनियम की धारा 68-डी के तहत अधिसूचित किया जाता है, तो परिवहन प्राधिकरण के पास ऐसे मार्ग या उसके हिस्से पर निजी ऑपरेटरों द्वारा परमिट देने के लिए किसी भी आवेदन को अस्वीकार करने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता है। ऐसे मार्गों के लिए अनुमति केवल निगम को ही दी जा सकती है। इस संबंध में अब्दुल गफूर बनाम मैसूर राज्य (ए.आई.आर. 1961 एस.सी.1556) के निर्णयों का संदर्भ दिया जा सकता है नीलकंठ प्रसाद बनाम बिहार राज्य

(मनु/एस. सी./0259/1961:ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 1135) शोभराज ओधरमल बनाम राजस्थान राज्य (एम. ए. एन. यू./एस. सी./0305/1962:ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 640) और गौरी शंकर शर्मा बनाम बिहार राज्य और अन्य (मनु/बी. एच./0051/1969:ए. आई. आर. 1969 पैट 192)। इन निर्णयों पर एन. पी. सिंह, न्यायमूर्ति के निर्णय में ध्यान दिया गया है, हालांकि, सवाल यह है कि क्या याचिकाकर्ता के लिए यह खुला है कि वह पूर्व-भेजे गए रिट आवेदन में इस बिंदु का आग्रह करे क्योंकि मनु/बी. एच./0043/1975 में पहले के मामले की सुनवाई के समय इसका आग्रह नहीं किया गया था:ए. आई. आर. 1975 पैट

6. अब यह तय कानून है कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 में सन्निहित न्यायपालिका के सिद्धांत, संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट, आवेदनों के साथ-साथ इस सिद्धांत पर भी लागू होते हैं कि यह बड़े पैमाने पर जनता के हित में है कि अमलगैमेटेड कोलफील्ड्स लिमिटेड और एक अन्य बनाम जनपद सभा छिंदवाड़ा और अन्य (मनु/एस. सी./0311/1962:ए.आई.आर. 1964-एस.सी.) के मामले में सक्षम अधिकार क्षेत्र की अदालतों द्वारा सुनाए गए बाध्यकारी निर्णयों के साथ एक अंतिमता जुड़ी होनी चाहिए: ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 1013) में यह कहा गया था कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 द्वारा अधिनियमित न्यायिक प्रक्रिया का एक विशेष और कृत्रिम रूप होने के कारण रचनात्मक न्यायिक प्रक्रिया को आम तौर पर संविधान के अनुच्छेद 32 या अनुच्छेद 226 के तहत दायर रिट याचिकाओं पर लागू नहीं किया जाना चाहिए। हालांकि, इस मामले को देवीलाल मोदी बनाम बिक्री कर अधिकारी, रतलाम और अन्य (मनु/एस. सी./0266/1964:ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 1150) जहां यह इंगित किया गया था कि अमलगैमेटेड कोलफील्ड्स लिमिटेड के मामले में न्यायनिर्णायक के सिद्धांतों के संबंध में की गई टिप्पणियों को इस महत्वपूर्ण तथ्य के आलोक में पढ़ा जाना चाहिए कि जिस आदेश को दूसरी रिट याचिका में चुनौती दी गई थी, वह एक अलग अवधि के संबंध में था और उसी अवधि के लिए नहीं था जो पहले की याचिका में शामिल था और यह भी बताया गया था कि

जहां अदालतें मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के सवाल से निपटती हैं, उन्हें उक्त अधिकारों को बनाए रखने के लिए लगातार प्रयास करना चाहिए और असंवैधानिक आक्रमणों को समाप्त करना चाहिए, लेकिन ऐसा करते हुए, न्यायनिर्णायक के सिद्धांतों की अनदेखी नहीं करनी चाहिए, क्योंकि ऐसे मामले में सार्वजनिक नीति के विचारों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है और बुनियादी में से एक है। इसके बाद, मैसूर राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम बाबाजन कंडक्टर और एक अन्य (मनु/एस. सी./0323/1977) के मामले में:ए. आई. आर. 1977 एस. सी. 1112), जो सड़क परिवहन से भी संबंधित है, यह अभिनिर्धारित किया गया कि उस मामले में प्रतिवादी उस राहत का दावा नहीं कर सकता है जिसका उसने पिछली याचिका में दावा किया था। यह देखा गया कि हालांकि पहले की याचिका में मांगी गई राहत को विशेष रूप से खारिज नहीं किया गया था, लेकिन इसे खारिज कर दिया गया माना जाएगा। इसलिए, यह निर्णय यह निर्धारित करता है कि रचनात्मक न्यायपालिका के सिद्धांत रिट कार्यवाही पर लागू होते हैं। यह भी अच्छी तरह से तय किया गया है कि रेस जुडिकाटा का सिद्धांत एक ही कार्यवाही के दो चरणों के बीच लागू होता है (MANU/SC/0295/1960 देखें):ए. आई. आर. 1960 एस. सी. 941)। इसलिए, यह देखा जाना चाहिए कि क्या मनु/बी. एच./0043/1975 में पहले के निर्णय में प्रस्तुत किया गया है:ए. आई. आर. 1975 पैट 179 में यह अभिनिर्धारित किया गया कि अधिसूचित किए जा रहे मार्ग का 108 मील, प्रत्यर्थी संख्या 4 के लिए उस मार्ग के लिए परमिट दिए जाने पर रोक था-यह भी देखा जाना चाहिए कि क्या वर्तमान मामले में रचनात्मक न्यायिक प्रक्रिया के सिद्धांत लागू होते हैं।

7. यह तथ्य कि 108 मील के मार्ग को अधिसूचित किया गया है, चुनौती के दायरे में नहीं है और इसलिए प्रतिवादी संख्या 4 को आम तौर पर उस मार्ग के लिए अनुमति नहीं दी जा सकती है। यह निगम के पक्ष में एक बिंदु था। यह सच है कि पहले के रिट आवेदन में न्यायाधिकरण के आदेश को दरकिनार कर दिया गया था और मामले को अभिलेख पर

सामग्री पर नए सिरे से विचार करने और कानून के अनुसार नए सिरे से निर्णय दर्ज करने के लिए भेज दिया गया था। हालाँकि, इस संदर्भ में यह याद रखना होगा कि यदि मोटर वाहन अधिनियम की धारा 68 थ की याचिका उठाई गई होती और निगम के पक्ष में पहले के रिट आवेदन में निर्णय लिया गया होता, तो परिणाम यह होता कि प्रतिवादी संख्या 4 को उसके पक्ष में मार्ग के लिए परमिट जारी करने के लिए विचार करने से रोक दिया जाता। इस पहलू का आग्रह पहले के रिट आवेदन में नहीं किया गया था और न ही इसे तब उठाया गया था जब मामला पहली बार न्यायाधिकरण के समक्ष गया था। यह नहीं कहा जा सकता है कि MANU/BH/0043/1975 में निर्णय के रूप में: ए. आई. आर. 1975 पी. 179 निगम के पक्ष में था, निगम इस मुद्दे को उठाने के लिए बाध्य नहीं था क्योंकि जब पहले के रिट आवेदन पर इस न्यायालय की पीठ के समक्ष बहस की जा रही थी तो यह ज्ञात नहीं था कि न्यायालय का निर्णय क्या होगा। इसलिए, मेरा विचार है कि चूंकि उपरोक्त बिंदु पहले के रिट आवेदन में नहीं उठाया गया था, इसलिए निगम को रचनात्मक न्यायपालिका के सिद्धांतों पर इस बिंदु को फिर से उठाने से रोका जा सकता है। मैं न्यायमूर्ति एन. पी. सिंह से भी सहमत हूँ कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट विवेकाधीन है और इस तरह की राहत देने में याचिकाकर्ता के आचरण और जिस तरीके से उसने अपना उपाय किया है, उस पर विचार किया जाना चाहिए। मैं पहले ही बता चुका हूँ कि न्यायाधिकरण ने रिमांड के बाद यह निर्णय लिया है कि निगम का मुकदमेबाजी के क्षेत्र से परे के मार्ग में बहुत कम हित बचा है। मनु/बी.एच./0043/1975 में: ए. आई. आर. 1975 पैट 179 में यह भी कहा गया कि "यदि न्यायाधिकरण नवीकरण के लिए निगम के दावे को अस्वीकार करना चाहता है तो उसे धारा 47 द्वारा आदेशित विचारों को ध्यान में रखते हुए मामले की विस्तार से जांच करनी चाहिए" और इसके आवेदन को एक स्पष्ट निष्कर्ष दर्ज करने के बाद खारिज किया जा सकता है कि निगम के पक्ष में परमिट का नवीनीकरण आम जनता के हित में नहीं था। न्यायाधिकरण, मामले के तथ्यों पर विस्तार से विचार करने के बाद, इस निष्कर्ष

पर पहुंचा कि वह इस मार्ग पर सेवा प्रदान करने में अत्यधिक अनियमित था और इस मार्ग पर उस तरीके से वाहन नहीं चला रहा था, जिस तरह से उसे करना चाहिए था और जब भी वह चाहे इस मार्ग से वाहनों को दूर रखता था और इसलिए, निगम को यह मार्ग सौंपना यात्रा करने वाली जनता और धारा 47 (1) की भावना के लिए निरंतर सेवा का नहीं हो सकता है। यदि मोटर वाहन अधिनियम को अनुमति दी जाती है तो वह निरस्त हो जाएगा।

8. आगे बढ़ने से पहले यह ध्यान दिया जा सकता है कि हालांकि मनु/बी.एच./0043/1975 में पहले के निर्णय के आधार पर:ए. आई. आर. 1975 पैट 179 में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रश्नगत मार्ग एक अंतर-राज्यीय मार्ग है और अंतर-राज्यीय मार्ग नहीं है, बल्कि बाद में सर्वोच्च न्यायालय ने के. वेंकम्मा बनाम आंध्र प्रदेश सरकार और अन्य (एम. ए. एन. यू./एस. सी./0243/1977:ए. आई. आर. 1977 एस. सी. 1170) ने अभिनिर्धारित किया है कि जहां एक मार्ग एक से अधिक राज्यों से गुजरता है, यदि वह एक अंतर-राज्यीय मार्ग है। इसलिए, यह तर्क दिया गया कि नवीनतम निर्णय के अनुसार वर्तमान मार्ग एक अंतर-राज्यीय मार्ग होगा। हालांकि, जैसा कि MANU/BH/0043/1975 में है:ए. आई. आर. 1975 पैट 179 में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि मार्ग एक अंतर-राज्यीय मार्ग है, वर्तमान रिट आवेदन में कोई भी इस धारणा पर आगे नहीं बढ़ सकता है कि मार्ग एक अंतर-राज्यीय मार्ग है।

9. वर्तमान आवेदन में विचार के लिए अगला महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या प्रतिवादी संख्या 4 को प्रश्नगत मार्ग के लिए अनुमति दी जा सकती है। चूंकि दोनों विद्वान न्यायाधीशों ने इस धारणा पर इस प्रश्न की जांच करना उचित समझा है कि निगम के लिए इस बिंदु पर आग्रह की पूरी स्वतंत्रता है इसलिए यह सही है कि मुझे भी इस पर विचार करना चाहिए। पांच साल की अवधि जिसके लिए अनुमति दी गई थी और जो इस रिट आवेदन में चुनौती का विषय रहा है, 15 जून, 1980 को समाप्त हो गया। तत्पश्चात,

प्रत्यर्थी सं. 4 को 15 जून, 1980 से पांच साल की और अवधि के लिए एक नया परमिट जारी किया गया है और ऐसी स्थिति में रिट आवेदन फलहीन नहीं है और निगम द्वारा रिट आवेदन में संशोधन के लिए एक अनुरोध किया गया था जो निगम को नवीनीकरण के आदेश को चुनौती देने की अनुमति देता था। 11. यह विवादित नहीं है कि मार्ग का एक हिस्सा पश्चिम बंगाल राज्य में आता है और राज्य सरकार द्वारा मोटर वाहन अधिनियम की धारा 68 सी की उप-धारा (2) के तहत एक अधिसूचना जारी की गई थी जो 31 मार्च 1971 को राजपत्र में प्रकाशित की गई थी; इसकी प्रति अनुलग्नक 'सी' के रूप में संलग्न की गई है और इसलिए यह प्रतिवादी को अनुमति देने के लिए न्यायाधिकरण स्वतंत्र था। अधिसूचना का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:

अनुसूची में निर्दिष्ट मोटर वाहन अधिनियम की धारा 68 डी (3) के तहत अनुमोदित योजना, राज्य परिवहन उपक्रम को संचालन का टाल-मटोल वाला अधिकार देने से अन्य राज्यों के साथ किए गए पारस्परिक परिवहन समझौतों या राज्य सरकार की मंजूरी से अन्य राज्यों के साथ किए गए समान समझौते के अनुसार संचालित होने वाली अंतर-राज्यीय बस सेवाओं पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

बशर्ते कि अंतरराज्यीय मार्गों पर संचालित मौजूदा निजी सेवाओं के विस्तार की अनुमति राज्य के बाहर किसी भी गंतव्य तक नहीं दी जाएगी, सिवाय राज्य के पूर्व अनुमोदन के इस अधिसूचना की वैधता को चुनौती नहीं दी गई है।

इसकी प्रयोज्यता को लेकर विवाद है। यह प्रस्तुत किया गया है कि जैसा कि मनु/बी.एच./0043/1975: पैट 179 में है: इस मार्ग को राज्य के भीतर के मार्ग के रूप में माना गया है, इस प्रावधान की कोई प्रयोज्यता नहीं है जो केवल अंतर-राज्यीय मार्ग पर लागू होती है। इस प्रावधान को पढ़ने पर यह स्पष्ट है कि इसमें शब्द मार्ग का बिल्कुल भी उपयोग नहीं किया गया है। इस प्रावधान के लागू होने की पहली शर्त यह है कि यह एक

अंतर-राज्यीय बस सेवा होनी चाहिए। मेरे विचार से अंतर-राज्यीय बस सेवा को अंतर-राज्यीय बस मार्ग के रूप में नहीं देखा जा सकता है। के. वेंकम्मा के मामले में कृष्ण अय्यर न्यायमूर्ति ने बताया कि सड़क को मार्ग के साथ भ्रमित नहीं किया जा सकता है। इसी तरह, मेरा विचार है कि अंतर-राज्यीय बस सेवा को अंतर-राज्यीय मार्ग के साथ भ्रमित नहीं किया जा सकता है। इसलिए भले ही किसी को इस मामले में इस धारणा पर आगे बढ़ना पड़े कि मार्ग एक अंतर-राज्यीय मार्ग है, यह नहीं कहा जा सकता है कि ऐसी स्थिति में, उपरोक्त अधिसूचना की कोई प्रयोज्यता नहीं है और प्रतिवादी संख्या 4 को इस सेवा के लिए परमिट प्राप्त करने से रोक दिया गया है। जब उपरोक्त अधिसूचना जारी की गई थी तो निगम एक पारस्परिक समझौते के संदर्भ में प्रश्नगत मार्ग का संचालन कर रहा था। हालाँकि, यह दावा नहीं किया गया है कि वर्ष 1972 में प्रतिवादी संख्या 4 को परमिट दिए जाने के बाद, प्रतिवादी संख्या 4 बिना किसी पारस्परिक परिवहन समझौते के उक्त मार्ग का संचालन कर रहा है। कोई यह नहीं मान सकता कि ऐसा कोई पारस्परिक परिवहन समझौता नहीं है। यह निगम के लिए था जिसने यह दिखाने के लिए यह याचिका दायर की थी कि ऐसा कोई पारस्परिक परिवहन समझौता नहीं था। ऐसा नहीं किया गया है और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि प्रतिवादी संख्या 4 ने विशेष रूप से अनुरोध किया है कि उसे उपरोक्त अधिसूचना के खंड (2) के तहत अनुमति दी गई है जो कानूनी और वैध थी, तथ्यों के अनुरोध के अभाव में, यह नहीं माना जा सकता है कि यह उस अधिसूचना का उल्लंघन था। निगम की ओर से बेहतर दलीलों के अभाव में इस बिंदु पर निर्णय नहीं लिया जा सकता है और इसलिए, मैं यह अभिनिर्धारित करने के लिए विवश हूँ कि यह इंगित करने के लिए कुछ भी नहीं है कि प्रतिवादी संख्या 4 के पक्ष में अनुमति उपरोक्त अधिसूचना के खंड (2) के संदर्भ में नहीं है। यहां तक कि जब उसने अभिवचनों में संशोधन के लिए आवेदन किया था, तब भी उपरोक्त अधिसूचना के खंड (2) की गैर-प्रयोज्यता से संबंधित तथ्यों का विशेष रूप

से अनुरोध नहीं किया गया है, विशेष रूप से तब जब इसे न्यायाधिकरण के समक्ष नहीं उठाया गया था।

11. व्यक्त किए गए कारणों के लिए मेरा मानना है कि इस रिट आवेदन में कोई गुणागुण नहीं है और इसे खारिज किया जाना चाहिए। तदनुसार, मैं एन. पी. सिंह, न्यायमूर्ति द्वारा लिए गए निष्कर्षों से सहमत होकर प्रश्न का उत्तर नकारात्मक रूप से दूंगा। मुझे खेद है कि मैं एस. नारायण, न्यायमूर्ति से अलग निष्कर्ष पर पहुँच गया हूँ, इसलिए परिणाम यह है कि यह रिट आवेदन विफल हो जाता है और खारिज कर दिया जाता है, लेकिन मामले की परिस्थितियों में, लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

खण्डन (डिस्क्लेमर):- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।